15,17 नवम्बर 2006
जिनवाणी, 272

प्रतिक्रमण : कतिपय प्रमुख बिन्दु

श्री राणीदान भंसाली

- कषाय और योग के कारण आत्मा स्वस्थान (ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप) को छोड़कर अन्य स्थान में चली जाती है, उसे पुनः स्वस्थान में स्थित करना प्रतिक्रमण है। पापों से पीछे हटना प्रतिक्रमण है।
- १२ अणुव्रतों में १ करण १ योग वाला व्रत चौथा, एक करण तीन योग वाला पाँचवाँ, छठा, सातवाँ एवं दसवाँ, २ करण ३ योग वाले- १, २, ३, ६, ८, ९, १०, ११ एवं बिना करण योग का १२वाँ व्रत है।
- ४९ भांगों में से १ करण १ योग का भांगा तीसरा (करूँ नहीं कायसा) १ करण ३ योग का भांगा करूँ नहीं मन से वचन से काया से, १९वाँ भांगा। दो करण तीन योग का भांगा ४०वाँ करूँ नहीं कराऊँ नहीं- मन, वचन, काया से।
- १२ अणुव्रतों में यावज्जीवन १ से ८ तक, जावनियमं-नवमाँ एवं जाव अहोरत्तं-१०वाँ ११ वाँ अणुव्रत है।
- १२ अणुव्रतों में विरमण व्रत ६ हैं- १ से ५ और आठवाँ। परिमाण व्रत-छठा, सातवाँ।
- 'पज्जुवासामि' शब्द मात्र ९वें और ग्यारहवें व्रत में है। क्योंकि पूर्ण सावद्य योग का त्याग इन दोनों व्रतों में है।
- 'पेयाला' शब्द मात्र पहले अणुव्रत में और दर्शन सम्यक्त्व के पाठ में आता है और उसका अर्थ 'प्रधान' है।
- प्रतिक्रमण (आवश्यक सूत्र) के रचनाकार गणधर होते हैं और प्रतिक्रमण ३२ वाँ आगम आवश्यक सूत्र है।
- १२वें व्रत अतिथि संविभाग में साधु, साध्वी, प्रतिमाधारी श्रावक एवं भिक्षुदया वाले श्रावक आते हैं।
- श्रावक अनर्थदण्ड का त्याग ४ प्रकार से करता है- १. आर्त्तध्यान का त्याग २. प्रमाद-आचरण का त्याग ३. हिंसक पापों के साधन देने का त्याग ४. पाप कर्म करने के उपदेश देने का त्याग।
- श्रावक पौषध भी चार प्रकार के त्याग से करता है- १. आहार त्याग रूप २. कुशील के त्याग रूप ३. शरीर शृंगार त्याग रूप ४. सावद्ययोग त्याग रूप।
- श्रावक के यावज्जीवन रात्रि-भोजन का त्याग ७वें व्रत की कालाश्रित मर्यादा है और १-२ दिन का त्याग दसवें व्रत में है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- उत्तराध्ययन सूत्र २९वाँ अध्ययन के ७३ बोल की पृच्छा में ११वाँ बोल है कि प्रतिक्रमण करने से जीव के व्रतों के छिद्र बंद होते हैं। आस्रव रुकते हैं। साधक आठ प्रवचन माता में सावधान होता है, संयम में विचरता है।
- किसी वाहन में बैठकर अल्पकालीन संवर धारण कर प्रतिक्रमण के काल में प्रतिक्रमण किया जा सकता है। संवर करने का पाठ- द्रव्य से ५ आस्रव १८ पाप का त्याग, क्षेत्र से (वाहन में लगने वाले पाप और आस्रव त्याग के अतिरिक्त पाप एवं आस्रव का त्याग) क्षेत्र से- निर्धारित क्षेत्र तक पहुँचू तब तक, काल से- स्थिरता प्रमाणे, भाव से- १ करण १ योग से संवर का पच्चक्खाण "तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।"
- अढाई द्वीप के बाहर के तिर्यंच श्रावक एवं साधक चूँकि वहाँ चन्द्र-सूर्य अचल हैं, स्थिर हैं। अतः वे जातिस्मरण ज्ञान या अवधि ज्ञान के आधार से सामायिक एवं प्रतिक्रमण (भाव से) करते हैं।
- काउस्सग्ग में ध्यान विषयक- आवश्यकनिर्युक्ति की गाथा नं. १५३१, १५३२, १५३३ एवं प्रवचनसारोद्धार में गाथा नं.१८३, १८४, १८५ में देवसिय प्रतिक्रमण में १०० श्वासोच्छ्वास प्रमाण, राइय में ५० श्वासोच्छ्वास, पक्खी प्रतिकमण में ३०० श्वासोच्छ्वास, चौमासी में ५०० श्वासोच्छ्वास एवं संवत्सरी में १००८ श्वासोच्छ्वास चिन्तन की विधि बताई है।
- व्रत धारण नहीं किये हैं तो प्रतिक्रमण क्यों करें, ऐसा कहना उचित नहीं है। नीचे देखकर चलें और बिना देखे चलें दोनों अवस्थाओं में पैर में काँटा लग जाय तो निकालना ही है। अग्नि का जानकार और जानकार नहीं होने पर भी अग्नि में हाथ डालेगा तो हाथ जलेगा ही, क्योंकि प्रतिक्रमण में मात्र लगे हुए पापों की आलोचना ही नहीं परन्तु श्रद्धा-प्ररूपणा रूप, क्षमायाचना रूप एवं स्वाध्याय रूप भी हैं। अतः व्रत धारण नहीं किये हों तो भी प्रतिक्रमण करना उचित ही है।
- प्रतिक्रमण का जघन्य काल जघन्य पौरुषी का चौथाई भाग अर्थात् ३६ मिनट प्रमाण (आधार उत्तराध्ययन सूत्र का २६वाँ अध्ययन) और उत्कृष्ट काल सवा घंटा प्रमाण समझना चाहिये। अर्थात् राइय प्रतिक्रमण सूर्योदय के पूर्व तक पूरा हो जाना चाहिये। देवसिय प्रतिक्रमण सूर्यास्त के बाद प्रारम्भ होना चाहिए।
- पर्व प्रतिक्रमण मात्र संध्या में करने की आगमिक परम्परा रही हुई है, अतः पाक्षिक, चौमासी, सांवत्सरिक प्रतिक्रमण मात्र संध्या के समय ही किये जाते हैं। प्रातःकाल में तो मात्र राइय प्रतिक्रमण ही किया जाता है।
- तीर्थंकर गोत्र बाँधने के २० बोलों में ज्ञाताधर्मकथा सूत्र अध्ययन ८, प्रवचन सारोद्धार द्वार १० एवं आवश्यक सूत्र निर्युक्ति के अनुसार ११ वाँ बोल यह है कि भावपूर्वक उभयकाल षडावश्यक करते रहने से उत्कृष्ट रसायन आवे तो कर्मों की क्रोड़ खपावे और तीर्थंकर नाम कर्म का बंध करे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- दसवाँ देशावगासिक व्रत के अन्तर्गत १४ नियम, ३ मनोरथ एवं अल्पकालीन संवर का समावेश होता है।
- जहाँ तक संभव हो प्रतिक्रमण विधि से याद होने पर अकेले करना ज्यादा लाभदायक है वैसे सामूहिक में भी किया जा सकता है।
- ११वाँ व्रत पौषध करने का जघन्य काल चार प्रहर और उत्कृष्ट ८ प्रहर, १६ प्रहर आदि ८-८ बढ़ते हुए समझना चाहिए। प्रतिपूर्ण पौषध चौविहार युक्त ही आठ प्रहर का होता है। प्रतिपूर्ण पौषध में उपकरणों की प्रतिलेखना तीन बार करनी चाहिए।
- आठवें अणुव्रत के अन्तर्गत जो आठ आगार हैं वे पहले से आठवें व्रत के समझना चाहिये। किसी की धारणा से मात्र आठवें व्रत के हैं।
- प्रतिक्रमण के पूर्व में जो चउवीसत्थव का कायोत्सर्ग किया जाता है वह क्षेत्र विशुद्धीकरण है और दूसरे आवश्यक में जो प्रकट लोगस्स बोला जाता है वह तीर्थंकरों की नाम स्तुति रूप भाव विशुद्धि रूप समझना चाहिए।
- देवसि प्रतिक्रमण सूर्यास्त के बाद शुरू किया जाता है और राइय प्रतिक्रमण सूर्योदय के पूर्व पूरा कर लिया जाता है ऐसा क्यों? कारण यह है कि सूर्योदय के बाद साधक को स्वाध्याय, प्रतिलेखन, विहार, भूमिका आदि आवश्यक कार्य करने होते हैं। जिनकल्पी मुनि के लिये नियम है कि सूर्योदय से सूर्यास्त तक चले। इत्यादि कई कारणों से सूर्योदय के पूर्व राइय प्रतिक्रमण पूरा कर लिया जाता है।
- २४वें तीर्थंकर के समय लोगस्स को चउवीसत्थव या चतुर्विंशतिस्तव कहा जाता है तथा एक से तेबीस तीर्थंकरों के समय चउवीसत्थव को 'उत्कीर्तन' कहा जाता है।
- पूरे प्रतिक्रमण में हर आवश्यक के पहले तीन बार तिक्खुत्तो से वंदना करके आज्ञा लेनी चाहिये और बीच-बीच में श्रावक सूत्र, ९९ अतिचार प्रगट बोलने से पूर्व भी वंदना करते हैं।
- प्रतिक्रमण में चार लोगस्स की जगह १६ या १७ नवकार, ९९ अतिचार की जगह (नहीं आने पर) ३२ नवकार का ध्यान इस प्रकार की परम्परा उचित नहीं है। जब तक ध्यान नहीं आवे या बड़े भाई 'नमो अरहंताणं' का उच्चारण प्रगट में (ध्यान आ जाने पर) नहीं करे तब तक नवकार का ध्यान कराना उचित है) अर्थात् काउसग्ग पूर्ण होने तक नवकार का ध्यान करते रहना चाहिए।
- दसवें देशावगासिक व्रत में चौथा, पाँचवाँ, छठा, सातवां और अपेक्षा से पहले अणुव्रत का समावेश हो जाता है।
- संवत्सरी में प्रतिपूर्ण पौषध के ऊपर यदि पोरसी की जाय तो दो अष्टप्रहर पौषध का लाभ होता है एवं अनाभोग से हुए पापों का प्रायश्चित्त उतर जाता है और चौमासी पक्खी में पौषध के ऊपर पोरसी करने से चार माह का अनाभोग से लगे हुए पापों का प्रायश्चित्त उतर जाता है एवं अष्टप्रहर पौषध का लाभ प्राप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है।

- खेत्तवत्थुप्पमाणाइक्कम्मे (अणुव्रत ५वाँ अपनी स्वामित्व की भूमि का अतिक्रमण। खित्तवुड्ढी- (छठा अणुव्रत)- गमन क्षेत्र का अतिक्रमण। यही दोनों में अन्तर है।
- किसी भी प्रकार के कायोत्सर्ग अवस्था में आँखे न तो पूरी बंद और न ही पुरी खुली रहनी चाहिये। कुछ खुली और कुछ बंद रखनी चाहिये। आधार तस्स उत्तरीकरणेणं का पाठ।
- चौथे पद की वंदना में ४ निक्षेप हैं - १. नाम २. स्थापना ३. द्रव्य और ४. भाव । चार प्रमाण- १. आगम प्रमाण २. प्रत्यक्ष ३. उपमा ४. अनुमान। सात नय- १.नैगम नय २. संग्रह नय ३. व्यवहार नय ४. ऋजुसूत्र नय ५. शब्द नय ६. समभिरूढ नय ७. एवंभूतनय।
- चार मूलसूत्र हैं। मूलसूत्र की संज्ञा क्यों दी है? आत्मा के मूलगुण चार हैं- ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप। इनमें से ज्ञान-नंदीसूत्र, दर्शन, अनुयोगद्वार सूत्र, चारित्र-दशवैकालिक और तप उत्तराध्ययन सूत्र की अपेक्षा से है।
- चौथे पद की वंदना में- सारए- विस्मृत पाठ का स्मरण कराने वाले। वारए- पाठों की अशुद्धि बताने वाले। धारए- नया पाठ सिखाने वाले ये अर्थ होते हैं।
- प्रतिक्रमण में छठा आवश्यक प्रत्याख्यान यदि काल के उपरान्त (सूर्योदय के बाद) धारण करे तो अर्थात् काल का अतिक्रमण करे तो साधु के लिये १ उपवास और श्रावक के लिये १ सामायिक का प्रायश्चित्त बताया है, यहाँ आगम आधार नहीं है, मात्र व्यवस्था रूप है।
- सातवें व्रत के अतिचारों में जो १५ कर्मादान हैं। उनमें से छठे से दसवें तक दंतवाणिज्जे से विषवाणिज्जे तक ये पाँच व्यापार रूप हैं बाकी के दस कर्मरूप हैं।
- देवसिय, राइय प्रतिक्रमण में छठे आवश्यक में जो भी पच्चक्खाण करते हैं वह पच्चक्खाण, पच्चक्खाण करते ही चालू हो जाते हैं। चाहे नवकारसी हो, पोरसी हो या कोई भी पच्चक्खाण हो। खुला रखे तो पच्चक्खाण के अनुरूप होते हैं।
- दयाव्रत के ११ अणुव्रत में लेना या दसवें में- दसवें व्रत में मर्यादित भूमि में हिंसादि आस्रव खुले रहते हैं। दयाव्रत में हिंसादि आस्रवों का यथाशक्ति करण योगों से त्याग किया जाता है। दयाव्रत दसवें व्रत में आ ही नहीं सकता। इसे ग्यारहवें व्रत में समझना चाहिए। कम समय के लिये एक आहार या चारों आहार खुला रखने से देश पौषध होता है। भगवती सूत्र शतक १२ उद्देशक पहले में, पुश्कली जी आदि श्रावकों के लिए खाते-पीते पौषध करने का उल्लेख है जिसे अभी दया कहते हैं।
- जिसने यावज्जीवन के लिए नवकारसी, पोरसी आदि उत्तरगुण रूप पच्चक्खाण लिये हैं, उन्हें प्रतिदिन नवकारसी आदि पच्चक्खाण पालना आवश्यक हैं। यदि ५ अणुव्रत जो श्रावक के लिये देशमूलगुण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पच्चक्खाण यावज्जीवन के लिये लिए हों जैसे ब्रह्मचर्य, अस्तेय आदि उन्हें प्रतिदिन पच्चक्खाने और पालने की आवश्यकता नहीं है।

- श्रावकों के १२४ अतिचार कौन-कौन से हैं- १२ व्रतों के ७५, सम्यक्त्व के ५, संलेखना के ५, ज्ञानाचार के ८, दर्शनाचार के ८, चारित्राचार के ८, तपाचार के १२, वीर्याचार के ३ इस तरह कुल १२४ अतिचार भी होते हैं।
- ज्ञान के १४ अतिचार में शुरू के ५ उच्चारण संबंधी, ६ से ८वें तक पढ़ने की अविधि संबंधी, बाकी ६ काल संबंधी हैं।
- करण और योग की परिभाषा- क्रिया के साधन को करण कहते हैं। करण ३ हैं- करना, कराना और अनुमोदन करना। योग- व्यापार रूप हैं, ये तीन हैं- मन, वचन और काया।
- १२वें व्रत के अन्तर्गत जो १४ प्रकार की चीजें साधु-साध्वी को बहराते हैं उसमें से असण-पाण आदि ८ चीजें अप्रतिहारी हैं क्योंकि लेकर वापिस नहीं की जाती और पीठफलक आदि ६ प्रकार की चीजें प्रतिहारी हैं अर्थात् कार्य निष्पन्न होने पर वापिस की जाती है।
- प्रतिक्रमण में ९९ अतिचार के ध्यान में मात्र अतिचार नहीं बोलकर पूरा स्थूल का पाठ बोलना (ध्यानावस्था में) ज्यादा लाभ का कारण है।

-भाईसा मार्केटिंग सिनेमा के पास, राजनांदगाँव (छत्तीसगढ़)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org